सुनने की कला क्या है, हृदय से सुनना क्या होता है, इसका क्या तात्पर्य है? यदि आप हृदय से नहीं सुनते हैं तो यह निरर्थक है। यदि आप ध्यान से, स्नेहपूर्वक सुनते हैं, एक दूसरे के प्रति गहरी सहसंवाद की भावना के साथ सुनते हैं, तो इसका मतलब है आप अपनी सारी इंद्रियों सहित सुन रहे हैं... क्या आप इस तरह से सुनेंगे? जिन्हें हम पसंद नहीं करते हैं, जिन्हें हम नासमझ मानते हैं, क्या उनको भी हम इस तरह से सुन सकते हैं?

जे. कृष्णमूर्ति

हृदय से सुनना

पुपुल जयकर : मुझे लगता है हम सभी में जिस बेहद ज़रूरी बात का अभाव है, वह है करुणा। बनारस में एक बार आपने एक प्रष्न उठाया था, 'क्या हृदय से सुनना संभव है?' हृदय से सुनना – इसका क्या तात्पर्य है?

कृष्णमूर्ति : क्या हम इस विषय पर चर्चा करें?

फ्रिट्ज : क्या हम पदार्थ के गुण–स्वभाव की जांच–पड़ताल कर सकते हैं?

कृष्णमूर्ति : देखिये सर, मैंने यह कहा था कि विचार एक भौतिक प्रक्रिया है और जो कुछ भी विचार ने खड़ा किया है – तकनीकी या मनोवैज्ञानिक मान्यताएं, देवी–देवता, धर्म का सारा कारोबार जो विचार पर आधारित है – यह सारा कुछ एक भौतिक प्रक्रिया है। उस अर्थ में विचार पदार्थ है। विचार अनुभव है, ज्ञान है, जो जानकारी के रूप में कोषिकाओं में संगृहीत है और यह ज्ञान के द्वारा निर्मित किसी ख़ास लीक पर ही कार्य करता है। यह सारा कुछ मेरे लिए एक भौतिक प्रक्रिया है। पदार्थ क्या है, मुझे नहीं मालूम। मैं उस विषय में कुछ नहीं जानता, इसलिए चर्चा भी नहीं करूंगा।

फ्रिट्ज : मैं एक वैज्ञानिक के नज़रिये से इसकी पड़ताल नहीं कर रहा हूं। मेरा कहना है कि पदार्थ एक अज्ञात विषय है। तो मुझे यह लगता है कि जब हम अज्ञात का अन्वेषण करते हैं ...

कृष्णमूर्ति : आप अज्ञात की खोज–बीन नहीं कर सकते। सावधानी रखें, आप ज्ञात की खोज–बीन कर सकते हैं, उसकी सीमा तक जा सकते हैं और जब आप उसकी सीमा के अंत तक पहुंच जाते हैं, तो उससे बाहर निकल चुके होते हैं। आप मात्र ज्ञात की ही खोज–बीन कर सकते हैं।

पुपुल : यानी कि विचार की ...

कृष्णमूर्ति : हां, बिलकुल। लेकिन जब ये कहते हैं कि अज्ञात की जांच–पड़ताल, खोज, छान–बीन कीजिए, तो हम यह नहीं कर सकते हैं। पुपुल यह प्रष्न उठा रही हैं : यह क्या है, करुणा के साथ सुनने का क्या मतलब है?

पुपुल : यह एक निर्णायक बिंदु है। हममें करुणा है, तो सब कुछ है।

शामिल मैंने किया। शायद हम फिलहाल इस शब्द को प्रयोग में न लाएं।

पुपुल : कृष्णजी ने हृदय से सुनने के बारे में बोला था, और मैं इसकी गहराई में जाना चाहूंगी।

कृष्णमूर्ति : तो हम इन दो बातों को लेकर चलते हैं – सुनना और अपने हृदय से सुन पाना, इसका अभिप्राय क्या है?

राधा बर्नियर : हमने यह कहा था कि विचार से आया प्रत्युत्तर खंडित होता है, आंषिक होता है। उस प्रत्युत्तर को हम चाहे जिस नाम से पुकारें, अवलोकन या सुनना या इसे जो कुछ भी कहें, बात एक ही है। है कि नहीं? तो क्या हृदय वह है जो अखंडित, अनांषिक है? क्या हमारा तात्पर्य यही है?

कृष्णमूर्ति : ज़रा ठहरें। सारी इंद्रियों के पूरी तरह खिल उठने के साथ सुनना एक बात है, किसी एक ख़ास इंद्रिय के द्वारा आंषिक श्रवण तो विखंडित है।

राधा : जी हां।

कृष्णमूर्ति : यानी कि यदि मैं अपनी समस्त इंद्रियों के साथ सुनता हूं तब सुनने या नहीं सुनने को नकारने की समस्या नहीं उठती है। परंतु हम सुनते ही तो नहीं हैं।

सुनंदा पटवर्धन : सर, जब आप हृदय से सुनने की बात करते हैं, तो मेरे भीतर से उत्तर उठता है कि मैं इसे नहीं जानती। परंतु एक ऐसी गति है, एक ऐसी भावना है, एक ऐसा सुनना है, जिसमें चेतना विचार नहीं है। मैं यह देखती हूं कि जब मैं राधा जी या किसी और को सुनती हूं, उस वक्त भावना की एक गतिषीलता होती है; एक ख़ास तरह का भाव होता है जिसके साथ हम दूसरे को सुनते हैं। जब वह भावना मौजूद होती है, तब एक अलग ही तरह का संवाद हो पाता है।

कृष्णमूर्ति : क्या भावना विचार से भिन्न है?

सुनंदा : मैं इसी बात की ओर बढ़ रही थी।

पुपुल : भावना विचार से भिन्न है।

सुनंदा : यदि भावना विचार से भिन्न नहीं है, तब तो हमें विचार के अलावा किसी अन्य गतिविधि का पता ही नहीं है। उस कथन को स्वीकार कर पाना बहुत कठिन है, क्योंकि हमने स्नेह की मृदुलता को भी महसूस

है। अन्यथा कोई संप्रेषण संभव नहीं है।

सुनंदा : रुचि वाली बात को तो हम समझ सकते हैं, परंतु स्तर का पता लगाना बहुत कठिन है।

पुपुल : मैं कुछ कहूं? 'संप्रेषण' शब्द को यहां ला कर आप दो व्यक्तियों का संदर्भ भी ले आए हैं। हृदय से सुनने की अवस्था में, हो सकता है दो हों ही नहीं।

कृष्णमूर्ति : जी हां। हम उस बिंदु पर भी चर्चा करेंगे। 'अपने हृदय से सुनना' क्या है? मैं आपसे ऐसा कुछ कहना चाहता हूं जिसको मैं बहुत गहराई में महसूस करता हूं। आप इसे कैसे सुनते हैं? मैं चाहता हूं कि इसमें आप भी सहभागिता करें, मेरे साथ इसे महसूस करें, मैं चाहता हूं कि आप भी इसमें मेरे साथ पूरी तरह से हो लें। इसके बगैर संप्रेषण कैसे संभव है?

सुनंदा : हमें स्तर का पता कैसे चलेगा?

कृष्णमूर्ति : जिस क्षण यह केवल बौद्धिक व शाब्दिक न रहकर एक तीव्र, ज्वलंत समस्या होगी, एक गहन मानवीय समस्या होगी, जिसे मैं आपको बताना चाह रहा हूं, आपसे बांटना चाह रहा हूं। तब हमें सम स्तर पर होना ही होगा, वरना आप सुन नही पाएंगे।

सुनंदा : यदि गहन गंभीरता हो, तब क्या सही स्तर भी होगा?

कृष्णमूर्ति : आप इस वक्त सुन नहीं रहे हैं। यही मेरी समस्या है। मैं आपसे कुछ कहना चाह रहा हूं जो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, गंभीर है। मैं चाहता हूं कि आप इसे सुनें क्योंकि आप भी एक मानव हैं और यह आपकी भी समस्या है। हो सकता है कि आपने इसकी वास्तव में छान–बीन न की हो। इसलिए मेरे साथ वार्ता करने में, आप अपनी स्वयं की उत्कटता को इसमें ला रहे हैं। अतः सुनने में एक सहभागिता, एक अषाब्दिक संप्रेषण निहित है। एक ऐसा भी सुनना होता है, सहभागिता होती है, जिसमें शाब्दिक विकृति का अनुपस्थित होना निहित है।

पुपुल : ज़ाहिर है कि आप संप्रेषित तभी कर पाते हैं, जब आपस में एक निष्चित स्तर हो।

कृष्णमूर्ति : मैं यही कह रहा हूं। अब सुनंदा, आप मुझे कैसे सुनेंगी? क्या आप उस तरह से सुनेंगी?

पुपुल : ऐसा हमारे साथ नहीं घटित होता।

राजेष दलाल : हम किसी प्रयोजन के साथ सुना करते हैं। वह प्रयोजन बहुत सूक्ष्म हो सकता है या बिलकुल स्पष्ट। जब हम किसी और को सुनते हैं, तो सोचते हैं कि सुनकर कुछ नहीं मिलने वाला। इसी वजह से, हम जब 'के' को सुन रहे होते हैं तो कहीं अधिक ध्यान दे रहे होते हैं।

. . . . . तो हम इस सबको कैसे बदलें, ताकि एक दूसरे को सुन पाएं।

फ्रिट्ज : कहीं ऐसा तो नहीं कि हम व्याख्या कर लेते हैं?

कृष्णमूर्ति : नहीं, मैं जो कह रहा हूं उसकी अपनी तरफ से व्याख्या न कीजिए, भगवान के वास्ते, सुनिये। मैं कता (Kata) के पास जाता हूं और कहता हूं मैं कराटे के बारे में कुछ नहीं जानता हूं। मैं इसे फिल्मों में देखता हूं, पर मुझे कराटे आता नहीं है। तो मैं न जानने की अवस्था में उनके पास जाता हूं। अतः मैं सुन रहा होता हूं। परंतु हम 'जानते हैं' – और यही है आपकी कठिनाई। आप कहते हैं यह ऐसा होना चाहिए, वह वैसा होना चाहिए – और ये सब अटकलबाजियां होती हैं, मत होते हैं। जैसे ही मैं एक शब्द का प्रयोग करता हूं, आप पूरी तरह जीवंत हो उठते हैं। परंतु पहली बात है सुनने की कला। कला का अर्थ है हर चीज़ को अपनी सही जगह प्रदान करना। हो सकता है कि आपके अपने पूर्वाग्रह हों, अपने तय नतीजे हों, पर जब आप सुन रहे होते हैं तो इन सब को एक तरफ रखकर सुनें – चाहे वह व्याख्या हो, तुलना हो, निर्णय या मूल्यांकन, जो कुछ भी हो सब को एक तरफ रख दें। तब फिर संप्रेषण हो पाता है। जब कोई कहता है ''मैं तुमसे प्यार करता हूं'', आप यह नहीं कहते ''मुझे इस बारे में सोचने दीजिए।''

राधा : अतः, इन सब बातों को एक तरफ रख देना और समान उत्कटता तथा समान स्तर का होना एक ही है।

कृष्णमूर्ति : अन्यथा इसका मतलब ही क्या है?

राधा : मैंने यह देखा है, परंतु मैं ऐसा कर नहीं रही हूं।

कृष्णमूर्ति : इसे अभी करिये।

सुनंदा : मुझे लगता है, आप कह रहे हैं कि सुनने की क्रिया उस समय के लिए वह सारा कुछ पोंछ डालती है, समाहित कर लेती है।

में बता रहा है और मैं सुनता हूं। अतः वह मानवता का इतिहास ही सुना रहा है। तो मैं मात्र उन शब्दों को ही नहीं सुन रहा हूं, उसकी सतही बाहरी भावनाओं को, बल्कि मैं उसके कथनों की अगाध गहराइयों को भी सुन रहा हूं। यदि बात केवल सतही स्तर पर है, तो हम सतही स्तर पर चर्चा करते हुए ही आगे बढ़ते हैं, जब तक कि वह उसकी गहराइयों को महसूस न करने लगे। समझ रहे हैं? यह हो सकता है कि वह ऐसी किसी भावना को व्यक्त कर रहा हो जो सतही है, और अगर यह सतही है तो मैं कहता हूं कि हम इसमें थोड़ा गहरे पैठें। इस तरह से गहराई में जाते–जाते वह ऐसा कुछ व्यक्त करने लगता है जो हम सब के लिए समान रूप से सच है। वह ऐसा कुछ व्यक्त कर रहा है, जो समस्त मानवजगत से संबंधित है। आप समझ रहे हैं? अतः उसके और मेरे बीच कोई विभाजन नहीं है।

पुपुल : उस तरह सुन पाने का स्रोत क्या है?

कृष्णमूर्ति : करुणा। तो करुणा क्या है? जैसा कि फ्रिट्ज़ कहते हैं, यह हमारे लिए अज्ञात है। तो मुझे कैसे उस असाधारण प्रज्ञा को पाना है, जो करुणा है? मैं इस फूल को अपने हृदय में रख लेना चाहूंगा। तो अब व्यक्ति को करना क्या है?

फ्रिट्ज. : करुणा विचार के क्षेत्र में नहीं होती। इसलिए मुझे कभी यह एहसास नहीं हो सकता कि यह मुझमें है।

कृष्णमूर्ति : नहीं, आप इसे पाएंगे नहीं –– यह एक बरमे की तरह है, एक पेचकष की तरह, आपको इसे गहरे, और गहरे ले जाना होगा।

पुपुल : इसकी एक खुषबू होनी चाहिए।

कृष्णमूर्ति : बिलकुल। बिना खुषबू के, बिना अमृत के, आप करुणा के संबंध में बात ही नहीं कर सकते।

पुपुल : या तो यह है, या फिर नहीं है। फिर ऐसा क्यों है, सर, कि जब हम आपके साथ संवाद में होते हैं, तब तो यह भावना हममें होती है, आपका ऐसा क्या ज़बरदस्त असर हमारे ऊपर होता है कि हमारे सारे पूर्वाग्रह, सारी बाधाएं, सब कुछ गायब हो जाता है और यह तुरंत हमारे मन को मौन बना देता है?

कृष्णमूर्ति : यह एक कुएं के पास छोटी–सी बाल्टी ले जाने के समान है, या फिर एक बहुत बड़ी बाल्टी जिसे आप शायद उठा भी न पाएं। हममें

मैं इसे पाना चाहूंगा। मैं इसे एक अनमोल रतन की तरह निरखना चाहूंगा। यह मेरे साथ कैसे घटित हो? यही है मेरी खोज यात्रा। इन्होंने सुझाव दिया कि जो कुछ मुझे रोक रहा है उसे मैं देखूं। इन्होंने कहा कि यह विष्लेषणात्मक प्रक्रिया है और विष्लेषण करना समय की बरबादी है। मुझे नहीं पता कि क्या आप इसे सचमुच देख पा रहे हैं। विष्लेषण और विष्लेषणकर्ता दोनों एक ही हैं। इसे समझने में समय न लें, इस पर ध्यान न लगाने लगें, आसन लगा कर बैठ जाना और ऐसी ही तमाम चीज़ें न करने लगें। आपके पास समय नहीं है। अभी, इसी वक्त, क्या आप विष्लेषण करना बंद कर सकते हैं? पूरी तरह से? क्या आप यह कर सकेंगे? आप ऐसा करते हैं जब कोई भारी आपदा आन पड़ती है। तब आपके पास विष्लेषण करने के लिए कोई वक्त नहीं होता, आप उसी में होते हैं। क्या आप इसमें हैं? क्या आप मेरे प्रष्न को समझ रही हैं? यानी कि उसके पास यह अद्‌भुत सुगंध है जो उसके लिए एकदम स्वाभाविक है। वह नहीं कहती, 'मैंने इसे पाया कैसे, मैं इसका क्या करूं?' किसी तरह से उसके पास यह मौजूद है, और मैं चाहूंगा कि यह मेरे पास भी हो। मैं एक इनसान हूं और अगर यह करुणा नहीं है, तो कुछ भी नहीं है। तो इसका होना बहुत ज़रूरी है। और मैं विष्लेषण की सच्चाई को भी देख लेता हूं, इसलिए विष्लेषण मैं कभी नहीं करूंगा। क्योंकि मैं इस प्रष्न से घिरा हूं, इसमें निमग्न हूं, इस प्रष्न की आग में जल रहा हूं, इस घर में आग लगी है और मैं इस आग में घिरा हूं।

राधा : सर, जिस पल उसका सौंदर्य अस्तित्व में कहीं प्रकट होता है, यह प्रष्न नहीं उठता कि मैं इसे कैसे पाऊं?

कृष्णमूर्ति : मुझे यह चाहिए, इसे मैं कैसे पा लूं? मुझको परवाह नहीं; मैं भूखा हूं। आप भूख का विष्लेषण नहीं करते हैं।

राधा : मैं वह नहीं कह रही हूं।

कृष्णमूर्ति : माफ करें, आप क्या कह रही थीं?

राधा : मैं यह कह रही थी कि जिस क्षण भी कोई इससे भर उठता है, तब यह इच्छा नहीं जगती कि मुझको यह चाहिए। मैं नहीं जानती कि किस हद तक किसी में यह खुषबू भर उठी है, पर यह एहसास कि 'मुझको यह चाहिए' यहां पर मौजूद नहीं है।

हैं। और यह व्यक्ति ऐसा कुछ कर्म लाना चाहता है जो एक ज़बरदस्त संकटकाल से, चरमबिंदु से पैदा हुआ हो। यह व्यक्ति एक अंत ले आना चाहता है, क्योंकि तब किसी बहस, किसी विष्लेषण की गुंजाइष नहीं रहती। उसने यह चरमबिंदु सृजित किया है। क्या यह उसके प्रभाव, उसके शब्दों, उसकी भावना, उसके आग्रह का परिणाम है, या फिर यह एक ऐसी स्थिति है जिसका भेदन–विसर्जन आपको ही करना होगा। यही है उस व्यक्ति की मंषा। वह कहता है कि केवल यही एकमात्र चीज़ महत्त्वपूर्ण है।

अच्युत : यह संकट–स्थिति बाहर से आयी एक चुनौती है जिसका समुचित जवाब भीतर से देने में मैं असमर्थ हूं, और चूंकि मुझे कोई समुचित आंतरिक प्रत्युत्तर नहीं मिल पा रहा है, इसलिए यह संकट–स्थिति बनी है। जिस अन्य चरमबिंदु की आप बात कर रहे हैं, जैसा कि मैं समझ पा रहा हूं, वह तो किसी बाहरी तथ्य से प्रेरित नहीं है बल्कि भीतर का ही एक प्रक्षेपण है।

कृष्णमूर्ति : उसका इरादा एक चरमबिंदु निर्मित करना है, सतही नहीं, बाह्य नहीं अपितु भीतर।

अच्युत : क्या ये दोनों प्रवाह भिन्न नहीं हैं? एक स्थिति वह है जिसमें मन किसी बाहरी चरमबिंदु की तलाष में है और उसका समुचित प्रत्युत्तर भीतर से तलाष रहा है, और दूसरी तरह की क्रांतिबेला वह है जब आप अपने भीतर एक गहरी अपर्याप्तता, अभाव महसूस करते हैं जो यह कहती है कि इसको नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता क्योंकि यह एक भारी ज़िम्मेदारी है।

कृष्णमूर्ति : उसने आपके भीतर वह स्थिति निर्मित कर दी है, वह सत्य की बात कर रहा है। जब आप उससे बात करते हैं, तो क्या आपके भीतर वह स्थिति होती है? उसकी मांग यह है कि आपके भीतर वह चरम संकट–स्थिति हो, क्रांतिबेला हो, सतही क्रांतिबेला नहीं। मुझे लगता है कि यही है सुनना, हृदय से सुनना। उसने आपको इतनी गहनता से भीतर की ओर मोड़ दिया है, या आपसे सारे आश्रय छीन लिये हैं। मेरी समझ में यही हृदय से सुनना है। सावन आपसे कहता हैः कृपया भर लो जितना पानी भर सकते हो, अगले साल नहीं होगी बारिष। आप समझ रहे हैं न? इससे आप पानी इकट्ठा करने का हर साधन बनाने में जुट जाते हैं। तो इस सारी चर्चा के अंत में हम कहां हैं?

खंड–2

संस्मरण

दुख का अंत

– मेरी लट्यन्स

लंदन में तीन रात बिताने के बाद कृष्णजी वांदा स्केरेवेली से जिनेवा में मिले। वे उनके साथ ग्स्टाड चले गए जहां वांदा ने उनके लिए गर्मियां बिताने के लिए 'शॅले टेनेग' नाम का एक घर किराये पर लिया था। सानेन के नज़दीक एक गांव के टाउन हॉल में उनके लिए एक छोटी–सी संगोष्ठी का इन्तज़ाम किया गया...

उन्नीस अलग–अलग देषों के साढ़े तीन सौ लोगों ने सानेन की इस पहली गैदरिंग में हिस्सा लिया – टाउन हॉल में जितने लोग आ सकते थे यह संख्या उतनी ही थी। (अगले पच्चीस सालों के लिए सानेन गैदरिंग अंतर्राष्ट्रीय स्तर की एक सालाना घटना बनने जा रही थी, जिसमें हर वर्ष लोगों की संख्या बढ़ती गयी।) गैदरिंग से पहले कृष्णजी करीब दो सप्ताह 'षॅले टेनेग' में बिता चुके थे। वहां पहुंचने के अगले दिन, 14 जुलाई को उन्होंने अपनी *नोटबुक* में लिखाः

''अनुभव चाहे जितना सुखद, सुंदर और फलदायी क्यों न हो, उसकी पुनरावृत्ति की लालसा वह मिट्टी है जिसमें दुख फलता–फूलता है।' और दो दिन बाद उन्होंने लिखाः ''रात के अधिकांष पहर 'प्रॉसेस' ज़ारी रही; यह कुछ ज्यादा ही तीव्र थी। देह कितना सह पाएगी! पूरी देह में सिहरन थी। सुबह उठा तो सिर कांप रहा था।

''आज की सुबह वह असाधारण पावनता कमरे को भर रही थी। अपनी अपार तीक्ष्णता के साथ वह अंतर में प्रवेष कर रही थी, उसको भर दे रही थी, शुद्ध कर रही थी और उसको अपना बना दे रही थी। इसे दूसरे व्यक्ति (वांदा) ने भी महसूस किया। यह वह वस्तु है जिसे पाने के लिए हर मनुष्य लालायित रहता है और चूंकि वह लालायित रहता है इसलिए वह उसके पास आने से बचती है। साधु, संन्यासी, पुजारी उसको प्राप्त करने के लिए शरीर को यंत्रणा देते हैं और उनका यह आचरण उस चीज़ को आने से बस रोकता है। क्योंकि इसे ख़रीदा नहीं जा सकता, कोई

उसकी देखभाल करोगी?'' वांदा ने आगे लिखाः ''मैं अब भी नहीं समझ पा रही थी कि क्या हो रहा है। यह सब अत्यंत अनपेक्षित और मेरी समझ से परे था। जब कृष्णजी की चेतना वापस आयी तो उन्होंने मुझसे जो कुछ हुआ उसे बताने के लिए कहा, और इस कारण मैंने ये नोट्स तैयार किये, इस प्रयास में कि जो कुछ मैंने देखा और महसूस किया उसकी कुछ धुंधली स्मृति को संप्रेषित कर सकूं।''

जुलाई के आख़िर में आल्डस हक्स्ले और उनकी दूसरी पत्नी ग्स्टाड में थे और टाउन हॉल (सानेन) में कृष्णजी को सुनने कई बार आए। हक्स्ले के अनुसार : 'अब तक सुनी सबसे प्रभावकारी बातों' में यह थी। उन्होंने लिखाः 'यह बुद्ध के प्रवचन को सुनने जैसा था– इतनी अधिक शक्ति, इतनी जबरदस्त प्रामाणिकता, तथा किसी भी तरह के पलायनों, किसी भी तरह के प्रतिनिधियों, गुरुओं, उद्धारकों, धार्मिक नेताओं या मठ–मंदिरों को स्वीकार करने से दृढ़ इनकार। ''मैं आपको दिखाऊंगा कि दुख क्या है और दुख का अंत क्या है'' – और यदि आप दुख के अंत के लिए ज़रूरी शर्तों को पूरा नहीं करते हैं तो फिर आप दुख के कभी न समाप्त होने के लिए तैयार रहिए, फिर चाहे आप किसी भी गुरु या मठ–मंदिरों में विष्वास करते हों।'

स्पष्ट है कि हक्स्ले उनकी 6 अगस्त की छठी वार्ता का ज़िक्र कर रहे थे जिसमें कृष्णजी दुख के बारे में बोले थेः ''समय दुख का अंत नहीं कर सकता। हम किसी ख़ास पीड़ा को भुला भी सकते हैं, पर बहुत गहराई में दुख सदा मौजूद रहता है, और मैं समझता हूं दुख का पूर्ण अंत किया जा सकता है – कल नहीं, किसी समय में नहीं, बल्कि वर्तमान के यथार्थ को गहराई से देखते हुए और उसके पार जाते हुए।''

15 अगस्त की आख़िरी वार्ता के बाद कृष्णजी ने अपनी *नोटबुक* में लिखाः ''आज सुबह जागने पर फिर से वह अभेद्य शक्ति मौजूद थी जिसकी सामर्थ्य ही वह आषीष है... अस्पृष्य और शुद्ध, वार्ता के समय भी वह रही।''

पुस्तक में छप जाने पर यह वार्ता उतनी शक्तिषाली नहीं लगती। कारण, ऐसा प्रायः होता था कि किसी वार्ता में मौजूद कुछ लोगों को वह

थी जो कोई राख नहीं छोडती। उसके साथ–साथ आनंद था... अतीत और अज्ञात कभी किसी बिंदु पर नहीं मिलते; किसी भी क्रिया द्वारा वे एक साथ नहीं लाये जा सकते; इन दोनों के बीच न कोई सेतु है, न कोई मार्ग। दोनों न कभी मिले हैं और न कभी मिलेंगे। उस अज्ञेय के आगमन के लिए, उस अनंतता के होने के लिए, अतीत को समाप्त होना होगा।''

1976 में यह अद्‌भुत दस्तावेज प्रकाषित हुआ, पर न तो इंग्लैंड में और न अमेरिका में प्रेस का कोई ध्यान इस पर गया। केवल अमेरिका की 'पब्लिषर्स वीकली' में एक पैराग्राफ छपा जिसकी आख़िरी पंक्ति थीः ''कृष्णमूर्ति की षिक्षा आडंबरविहीन है, एक मायने में सब कुछ मिटा देने वाली है।'' पुस्तक की पांडुलिपि पढ़ने के बाद एकाध लोग इसे छापने के पक्ष में नहीं थे। उन्हें डर था कि इससे कृष्णजी के अनुयायी हतोत्साहित होंगे। क्योंकि कृष्णजी दृढ़तापूर्वक कहते आये थे कि मनुष्य तत्क्षण प्रत्यक्ष बोध के द्वारा अपने में आमूल परिवर्तन ला सकता है जिसमें समय की या क्रमिक विकास की कोई भूमिका नहीं है, जबकि *नोटबुक* से यह प्रदर्षित होता था कि कृष्णजी कोई सामान्य मनुष्य नहीं थे जिसका रूपान्तरण हुआ हो बल्कि भिन्न आयाम में रहने वाले एक असाधारण व्यक्तित्व थे। यह तर्कसंगत बात थी, और जब उनके सामने इसे रखा गया तो उन्होंने जवाब दिया– ''बिजली का बल्ब बनाने के लिए हम सभी को एडीसन बनने की आवाष्यक नहीं है।'' बाद में रोम में एक संवाददाता ने जब उनसे पूछा कि आप जिस अवस्था में हैं उसी में पैदा हुए तब फिर अन्य लोग उस चेतना की अवस्था तक कैसे पहुंच सकेंगे, इस पर कृष्णजी ने कहा– ''क्रिस्टोफर कोलंबस समुद्री जहाज से अमेरिका गया, हम लोग अब जेट से वहां जा सकते हैं।'

सर्दियों में भारत में कृष्णजी ने तेईस सार्वजनिक वार्ताएं दीं और इसके अलावा अनगिनत परिचर्चाएं कीं, इसलिए यह आष्चर्य की बात नहीं कि जब मार्च के मध्य में वे रोम पहुंचे तो पूरी तरह थके हुए थे। वहां वांदा उनसे मिलीं। उसके अगले दिन वे ज्वर से पीड़ित हो गये। उस अवस्था में वे शरीर से 'बाहर' चले गये, उसी तरह जब वे 'प्रॉसेस' के समय जाते थे। उनके जाने के बाद शरीर की देख–रेख के लिए जो सत्ता पीछे छूट गयी उसके वक्तव्यों को वांदा ने नोट कर लिया।...

हुए एक गहरे रंग के सूट, सफेद बुष्शर्ट और गहरे रंग की टाई में एक दुबली–पतली आकृति; पैरों में बेतहाषा पॉलिष किये हुए भूरे रंग के जूते जो एक–दूसरे की बगल में कुषलतापूर्वक रखे थे। मंच पर वे अकेले थे (उनका परिचय कभी नहीं दिया जाता था, और जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूं, वे कभी कुछ लिखकर नहीं लाते थे)। श्रोताओं में प्रत्याषा की तीव्र सिहरन दौड़ पड़ी और हॉल में पूर्ण निस्तब्धता छा गयी। वे वहां पूरी तरह शांत बैठे थे, देह में कोई हरकत नहीं थी, सिर को बस हल्के से इधर–उधर ले जाते हुए वे अपने श्रोताओं को निरख रहे थे। एक मिनट बीता, दो मिनट बीता; मैं उनके लिए संत्रस्त महसूस करने लगी। क्या वे पूरी तरह टूट गये थे? ऊपर से नीचे तक मैं उनके लिए चिंता की वेदना में झुलसने लगी कि तभी एकाएक उन्होंने मौन तोड़ा और बोलना शुरू किया। आवाज कुछ–कुछ उठती–गिरती हुई लय में थी, उसमें शीघ्रता जरा भी न थी। उच्चारण में अस्पष्ट–सा हिंदुस्तानी असर था।

मुझे यह बाद में पता चला कि उनकी हर वार्ता के प्रारंभ में यह लंबी ख़ामोषी रहती थी। यह अत्यंत प्रभावकारी होती थी लेकिन यह प्रभाव डालने के उद्देष्य से नहीं होती थी। बोलने से पहले उन्हें शायद ही कभी यह पता होता था कि वे क्या बोलने जा रहे हैं, और इसके लिए शायद वे श्रोताओं के मार्गदर्षन की प्रतीक्षा करते हुए नज़र आते थे। शायद यही कारण था कि उनकी हर वार्ता प्रायः इस तरह शुरू होती थी, जैसे– 'पता नहीं इस तरह की गैदरिंग का क्या मकसद हो सकता है?' अथवा, 'आप इससे क्या उम्मीद रखते हैं?' या, 'मैं समझता हूं यह भी उतना ही अच्छा हो अगर हम लोग वक्ता और श्रोता के बीच एक सच्चा संबंध स्थापित कर पाएं।'

ऐसा भी होता था जब उन्हें ठीक–ठीक मालूम होता था कि वे क्या बोलने जा रहे हैं, जैसेः 'आज की शाम मैं ज्ञान, अनुभव और काल पर बात करना चाहूंगा।' लेकिन जैसे–जैसे वार्ता आगे बढ़ती थी वह केवल इन्हीं विषयों तक सीमित नहीं रह जाती थी। उनका यह हमेषा आग्रह होता कि वे कोई उपदेष नहीं दे रहे हैं, बल्कि वे और श्रोता साथ मिलकर छानबीन कर रहे हैं। वार्ता के दौरान दो या तीन बार वे अपने श्रोताओं को इस बात की याद दिलाते।

वापस जाते तो लोगों के हाथ उनकी कार की खुली खिड़की से अंदर चले आते और उनके हाथों को स्पर्ष करने की कोषिष करते। एक बार वे सहम गये जब किसी ने उनका हाथ पकड़कर अपने मुंह में भर लिया।

सानेन की दूसरी गैदरिंग गर्मियों में एक विषाल टेंट में हुई। (सानेन नदी के समीप जिस किराये की भूमि पर टेंट खड़ा किया गया था, उस भूमि को KWINC ने 1965 में खरीद लिया और इसके लिए फंड राजगोपाल ने मुहैया कराया।) वांदा स्केरेवेली ने शॅले टेनेग को फिर किराये पर ले लिया – ऐसा वे प्रत्येक गर्मियों में 1983 तक करती रहीं। साथ में वे घर चलाने के लिए अपने एक सेवानिवृत्त रसोइया फोस्का को ले आती थीं। अगस्त के आख़िर में जब सभी वार्ताएं हो चुकीं तो कृष्णजी का स्वास्थ्य फिर बिगड़ा हुआ था। उन्होंने उस साल भारत जाना रद्द कर दिया और वे 'शॅले टेनेग' में क्रिसमस तक रहे।...

'शॅले टेनेग' छोड़ने के बाद कृष्णजी वांदा के साथ रोम चले गये जहां वांदा ने उनका परिचय तमाम विषिष्ट हस्तियों से कराया जिनमें फिल्म निर्देषक, लेखक और संगीतकार थे। इनमें प्रमुख नाम थेः फेलिनी, पोंटेकोर्वो, अल्बर्टो मोराविया, कार्लो लेवी, सेगोविया और कॅजल्स, जिन्होंने उनके लिए कार्यक्रम प्रस्तुत किया। आयलेक्सियो से वांदा उन्हें कई बार बर्नार्ड बेरेन्सन से मिलवाने 'आई टॅटी' ले जा चुकी थी। बेरेन्सन की डायरी में 7 मई 1956 की प्रविष्टि इस प्रकार है, जब वह नब्बे वर्ष के थेः ''कृष्णमूर्ति चाय परः सौजन्यता से पूर्ण, संवेदनषील, मेरी सारी आपत्तियां मानते हुए; निष्चय ही हमारी चर्चा बहुत कम विवादग्रस्त रही। यद्यपि उन्होंने 'परे जाने' ('बियोंड') पर जोर दिया और कहा कि यह अवस्था निष्चल है, यह घटनाविहीन अस्तित्व है, जहां कोई विचार नहीं, कोई प्रष्न नहीं, कोई – क्या? उन्होंने मेरे इस दावे को ख़ारिज कर दिया कि ऐसी अवस्था मेरे पष्चिमी ढांचे में ढले मस्तिष्क के लिए परे की बात है। मैंने उनसे यहां तक पूछ लिया कि कहीं वे मात्र एक शाब्दिक चीज़ के पीछे तो नहीं हैं। उन्होंने इसका दृढ़तापूर्वक खंडन किया, लेकिन बिना गर्म हुए।'' (*'सनसेट एंड ट्वालाइट' निकी मरिएनो (सं.) हॅमिष हॅमिल्टन, 1964*)

मार्च में हक्स्ले रोम में थे और प्रायः कृष्णजी से उनकी भेंट होती थी। यह उनकी अंतिम मुलाकात थी क्योंकि नवंबर में लॉस एंजिल्स में हक्स्ले

1964 की गर्मियों में नॉडे पुनः सानेन में थे। उसी समय वहां मेरी जिम्बालिस्ट (पूर्व में मेरी टेलर) भी आयी थीं जो फिल्म निर्माता सैम जिम्बालिस्ट की विधवा थीं। यूरोपियन संस्कृति में ढलीं वह न्यूयॉर्क के एक प्रतिष्ठित व्यावसायिक घराने की सौम्य, सुरुचिपूर्ण महिला थीं। अपने पति के साथ 1944 में उन्होंने कृष्णजी को पहली दफा ओहाय में सुना था। 1958 में हृदयाघात से जब उनके पति की मृत्यु हुई तो वह पुनः 1960 की ओहाय गैदरिंग में कृष्णजी को सुनने आयीं – उस समय भी वह भीषण शोक और विषाद में थीं। उसके बाद उन्होंने कृष्णजी के साथ एक लंबी निजी मुलाकात की जिसमें कृष्णजी ने उनसे मृत्यु के संबंध में जो कहा उसे समझने के लिए वह तैयार थीं : अर्थात, पलायन के सामान्य रास्तों से व्यक्ति मृत्यु से भाग नहीं सकता; मृत्यु के तथ्य को समझना ही होगा; यह अकेलेपन से पलायन है जो दुख उपजाता है, न कि अकेलेपन या मृत्यु की *सचाई*; दुख आत्म–दीनता है, प्रेम नहीं।

मेरी ने यह उम्मीद की थी कि कृष्णजी को वे फिर ओहाय में सुन सकेंगी। लेकिन जब उन्हें पता चला कि अभी ऐसा नहीं होने वाला है तो उन्होंने सानेन की यात्रा की। वहां उनकी मित्रता एलन नॉडे से हो गयी और कृष्णजी ने उन दोनों को गैदरिंग के बाद रुके रहने का निमंत्रण दे दिया ताकि वे लोग 'शॅले टेनेग' में होने वाली छोटी निजी परिचर्चाओं में शामिल हो सकें। मेरी ने फिर एक लंबी निजी बातचीत उनसे की।...

मैं 1965 के वसंत में एलन नॉडे और कृष्णजी से एक साथ सेविल रो में उनके दरजी हंट्समॅन के यहां मिली। एलन कृष्णजी के साथ ठहरे हुए थे और डोरिस विम्बल्डन में ही एक दूसरे घर में रहने चली गयी थी और उसने कृष्णजी की विम्बल्डन वार्ताओं की रिकॉर्डिंग का जिम्मा संभाल लिया था। जब कृष्णजी मेरे साथ अपनी वही पुरानी ब्लूबैल के उपवन की सैर के लिए गये तो पिछले कई सालों की अपेक्षा बहुत अधिक प्रफुल्लित दिखे। उन्होंने बताया कि एलन के आने से उनके जीवन में कितना बदलाव आ गया, वह साथ में यात्रा करते हैं और चीज़ों की देखभाल भी। कृष्णजी को उनके साथ एक सहज घनिष्ठता महसूस होती थी; वह प्रसन्नचित्त, गंभीर, ऊर्जावान और खुले दिमाग के व्यक्ति थे, भाषाएं सीख लेने की उनमें जन्मजात प्रतिभा थी। मेरी जिम्बालिस्ट भी तब लंदन में थीं लेकिन मैं उनसे अगले साल ही मिल पायी। मेरी ने एक कार किराये पर लेकर

राजघाट गैदरिंग 2006 संपन्न

कृष्णमूर्ति फाउंडेषन इंडिया का वार्षिक सम्मेलन राजघाट शिक्षण संस्थान, वाराणसी में 26 से 29 अक्टूबर के बीच संपन्न हुआ। सम्मेलन का मुख्य विषय था–How does one approach K's teachings? बाहर से आए लगभग 200 सहभागियों ने इसमें हिस्सा लिया। हमेषा की तरह राजघाट बेसेंट स्कूल के हॉस्टलों में सहभागियों के रहने की व्यवस्था की गयी। चार दिनों तक समूचा राजघाट परिसर पारस्परिक संवाद और सत्यान्वेषण की जिज्ञासा से अनुप्राणित रहा। इस बार की गैदरिंग में कुछ नये प्रयोग किये गये। ऐसा प्रायः देखा जाता था कि बड़े संवाद समूहों में सभी सहभागी खुलकर बराबर हिस्सा नहीं ले पाते अतः इस बार एक संवाद–समूह में मात्र 5 या 6 सहभागी शामिल किये गये। इसके अलावा पैनल परिचर्चाओं में आम सहभागियों को भी शामिल किया गया। अध्ययन सामग्री के तौर पर एक गैदरिंग पुस्तिका का प्रकाशन किया गया जिसका शीर्षक था – 'The Key is With You'. इसके अलावा सहभागियों को प्रत्येक दिन एक 'स्टडी शीट' भी उपलब्ध करायी गयी।

पहले दिन का उद्घाटन संभाषण सुश्री अहिल्या चारी ने दिया। गैदरिंग के स्वरूप के बारे में श्री राजेश दलाल ने विस्तार से प्रकाश डाला। दूसरे दिन प्रो. कृष्णनाथ की वार्ता हुई जिसके बाद कुछ सहभागियों ने एक पैनल के अंतर्गत उनसे संवाद किया। तीसरे दिन की वार्ता श्री एस. पी. कन्दस्वामी ने दी। इस वार्ता के बाद भी सहभागियों के एक पैनल ने उनके साथ संवाद किया। प्रत्येक दिन कृष्णमूर्ति की वाताओं का एक बड़े पर्दे पर वीडिया दिखाया गया।

प्रत्येक दिन शाम को सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। पहले दिन पंडित नित्यानंद हल्दीपुर का बांसुरी वादन हुआ। दूसरे दिन वसंत कालेज, राजघाट की छात्राओं ने डा. इरावती के निर्देशन में 'एक दिन शाम को' नाटक का मंचन किया। तीसरे दिन धनवंतरी कलाक्षेत्र, केरला के कलाकारों ने कथकली नृत्य नाटिका का मंचन किया।

29 अक्टूबर गैदरिंग का आखिरी दिन था। गैदरिंग में जो कुछ हुआ उस पर विचार–विमर्श किया गया। सहभागियों ने गैदरिंग के संबंध में अपने विचार रखे। दोपहर में कृष्णजी के वीडियो प्रदर्शन के बाद गैदरिंग का समापन हो गया।

dukZVd xSnfjax 2007

¼6&9 vizSy 2007½

(Theme: Mind in Meditation)

—".kewfrZ IVMh lsaVj] cSaxyksj }kjk dukZVd xSnfjax dk vk;kstu 6 ls 9 vizSy] 2007 ds chp fd;k tk jgk gSA xSnfjax dk mn~?kkVu 7 vizSy dks izkr% 10 cts oSyh Ldwy ds dSail esa gksxkA

jftLVªs'ku ,oa xSnfjax 'kqYd

xSnfjax esa Hkkx ysus dk dqy 'kqYd 850 #i;s izfr O;fDr gSA blesa vkokl ,oa Hkkstu dk 'kqYd 'kkfey gSA

xSnfjax esa Hkkx ysus ds fy, viuk vkosnu jftLVªs'ku 'kqYd ds lkFk] "Bangalore Education Centre, KFI, Bangalore" ds uke Mh-Mh ds ek/;e ls] bl irs ij Hkstsa %

Coordinator : Krishnamurti Karnataka Gathering 2007
Bangalore Education Centre (KFI), Thataguni Post
Bangalore 560062
Qksu% 080&28435243 bZesy% kfistudy@vsnl.com

युवकों के लिए गैदरिंग

¼23&31 fnlacj 2006½

—".kewfrZ IVMh lsaVj] cSaxyksj }kjk 18 ls 30 o"kZ vk;q ds ;qok yksxksa ds fy, ,d xSnfjax dk vk;kstu 23 ls 31 fnlacj] 2006 ds chp fd;k tk jgk gSA xSnfjax esa Hkkx ysus dk 'kqYd] ftlesa vkokl ,oa Hkkstu dh lqfo/kk 'kkfey gS] 2000 #i;s gSA

xSnfjax esa fgLlk ysus ds fy, —i;k bZesy ;k Qksu }kjk laidZ djsa : bZesy% kfistudy@vsnl.com osclkbV % www.jkstudy.org Qksu% 080&28435243